Peer Reviewed/
Refereed Journal

ISSN -PRINT-2231-3613ONLINE2455-8729
International Educational Journal
CHETANA
Impact Factor SJIF=4.157

Received on 06th Feb. 2019, Revised on 08th Feb. 2019; Accepted 15th Feb. 2019

आलेख

बाबा साहेब डॉ. भीमराव अम्बेडकरः सामाजिक न्याय दर्शन

* डा. बलवान गौतम
चेयर प्रोफेसर डॉ. अम्बेडकर पीठ
हिमाचल प्रदेश केंद्रीय विश्वविद्यालय,धर्मशाला (हि. प्र.)
ई–मेल.bs.20aug@gmail.com,मो. नं :9971327848

मुख्य शब्द–*श्रेणीकृत असमानता और अन्याय, सामाजिक व्यवस्था, सामाजिक संघर्ष आदि।*

बाबा साहेब डा भीम राव अम्बेडकर ने अपने घटनापूर्ण जीवन में एक विशिष्ट .अर्थशास्त्री, समाजशास्त्री, मानवविज्ञानी, शिक्षाविद, पत्रकार, प्रशासक एवं राजनीतिज्ञ के रूप में उत्कृष्ट योगदान दिया। इन सबसे परे वे एक महान समाज सुधारक, मानव अधिकारों के हिमायती और वंचितों एवं पद्दलितों के मुक्ति दाता थे, जिन्होंने अपना सारा जीवन भारत की सामाजिक चेतना को जागृत करने में लगा दिया। वस्तुतः जिस श्रेणीकृत असमानता और अन्याय पर आधारित सामाजिक व्यवस्था में एक अछूत समुदाय में भीमराव अम्बेडकर का जन्म हुआ था और उसके बाद उन्हें मूलभूत अधिकारों से वचंना का घाव झेला, उससे उन्हें एक उद्देश्य एवं जीवन का मिशन मिल गया। अतः सामाजिक न्याय का विषय उनके जीवन एवं मिशन का मौलिक बिन्दु रहा। इतना ही नहीं, आज भी बाबा साहेब के जीवन एवं मिशन का परीक्षण सामाजिक न्याय के क्षेत्रा में हुई प्रगति से मापा जाता है। प्रस्तुत लेख बाबा साहेब के सामाजिक न्याय की स्थापना सम्बन्धी दर्शन एवं उसके लिए किए गए संघर्ष की प्रस्तुति है।

डा) भीम राव अम्बेडकर .1891-1956) का जन्म जिस सामाजिक परिवेश में हुआ था, वह असमानता की सभी पराकाष्ठाओं को पार कर गया था। हिंदू समाज हजारों छोटी बड़ी जातियों में बँटा था। अस्पृश्यता ने आदमी को पशुवत् जीवन बिताने के लिए विवश कर दिया था। वस्तुतः अम्बेडकर युग की शुरुआत से पहले ही हिंदू सामाजिक व्यवस्थाओं में अछूत हिंदू सामाजिक तौर पर श्रेणीकृत, आर्थिक तौर पर दरिद्र, राजनीतिक तौर पर दबे हुए धार्मिक रूप बहिष्कृत एवं आर्थिक व सांस्कृतिक अवसरों[1] से निष्कासित थे। वे सभी प्रकार गुलामी से दृण्ड़ित थे और समस्त मानव अधिकारों से भी वंचित थे। इस प्रकार डाभीम राव अम्बेडकर अछूतोधार के शीर्ष संवाहक बनें किंतु वे इसके जनक नहीं थे। इससे पूर्व भी भारत में ., विशेषकर महाराष्ट्र में कई क्रांतिधर्मी महापुरुषों ने समाज की इस निन्दनीय व्यवस्था के विरूद्ध आवाज ही नहीं उठाई बल्कि सक्रियता के साथ सामाजिक बदलाव की पूर्व पीठिका भी तैयार की। सामाजिक परिवर्तन की यह प्रक्रिया दसवींग्यारहवीं - शताब्दी से प्रारम्भ हो गई थी। इससे भी पहले, ईशा के कई सौ वर्ष पूर्व महात्मा बुद्ध ने अपने धर्म में अछूतों को समानाधिकार के साथ सम्मिलित किया था। ग्यारहवीं शताब्दी में रामानुज ने एक अछूत को अपना परम शिष्य बनाया और अपने बनाए हुए मन्दिर में अछूतों का प्रवेश कराया। बाद की सदियों में चक्रधर, रामानन्द, कबीर, चैतन्य, एकनाथ, तुकाराम, रविदास आदि ने हिंदू चर्तुवर्णीय व्यवस्था से अलग होकर अपने संप्रदायों की स्थापना की। डाअम्बेडकर के काल में . ज्योतिबा फूले, गोपाल बाबा वालंकर आदि अछूतोद्धारकों के नाम विशेष रूप से रहे हैं। महात्मा गाँधी ने भी अछूतोद्धार को अपना एक मिशन बना रखा था।

डाभीमराव अम्बेडकर की विशिष्टता इस बात म .ंे है कि उनका जन्म हिन्दू अछूत समाज की महार जाति में हुआ और उन्होंने स्वयं छूआछूत की हृदय भेदक एवं मर्माक प्रहारों की स्वयं अनुभूति की। अनेक अध्ययनकर्ताओं ने डाअम्बेडकर के . लोकोत्तर कार्य के पूर्ण सूत्र महात्मा फूले के साथ जोड़ने का प्रयास किया है। स्वयं बाबा साहेब ने ज्योतिबा को अपना तीसरा गुरु माना है। फिर भी निसन्देह दोनों के आसपास का संस्कारी वातावरण, सामाजिक समस्याओं के आकलन के लिए आवश्यक उपलब्ध सामग्री व व्यक्तित्व की बौद्धिक व मानसिक स्थिति में अन्तर था। ज्योतिबा को सामाजिक कार्य की प्रेरणा आत्मबुद्धि में से निर्माण हुई थी तो डाअम्बेडकर आत्मानुभूति में से कार्य करने के लिए प्रवृत हुए थे। आत्मिक बुद्धि . कितनी भी संवेदनशील व व्यापक हो, तब भी अस्पृश्यता की प्रत्यक्ष दाहकता का केवल अनुमान ही किया जा सकता है,

उसकी अनुभूति नहीं की जा सकती। यही अन्तर दासता के बारे में आत्मोपम्य बुद्धि से प्राप्त लिंकन के अनुभव और मार्टिन लूथर किंग को प्राप्त वर्ण विद्वेष की प्रत्यक्ष अनुभूति में है।[2]

वस्तुतः अम्बेडकर के जीवनकाल में अत्यन्त महत्वपूर्ण घटनाएँ हुई थीं, जिनका प्रभाव उनके व्यक्तित्व पर पड़ा। व्यक्तित्व एवं विचारों के प्रभाव के कारण ही उनके चिंतन को विशिष्ट स्वरूप एवं आयाम मिला, जिसके कारण वे दलितों एवं भारतीय समाज के वंचित वर्ग के एक मौलिक प्रभावशाली नेता के रूप में उभरे हैं। सर्वप्रथम महत्वपूर्ण कारण जिसने डाअम्बेडकर . को सर्वाधिक प्रभावित किया, वे अमानवीय परिस्थितियाँ थीं जिसने हजारों वर्षों से दलितों को जीने के लिए बाध्य किया था। उन्हें सामाजिक, धार्मिक एवं आर्थिक मामलों में समानता के अधिकार से वंचित किया गया था। सार्वजनिक जीवन में उनके प्रवेश पर रोक थी। सवर्ण हिन्दू शिक्षकों एवं छात्रों के द्वारा शैक्षिक संस्थाओं में उनके साथ भेदभाव पूर्ण व्यवहार किया गया। जाति, पेशा और वर्ग के नाम पर मानव व्यवहार की दोहरी नीति ने उन्हें अत्यन्त गहराई तक पीड़ित किया। स्वाभाविक रूप से अपने परिवार के आध्यात्मिक वातावरण के साथ उनकी आत्मीयता बनी जबकि उच्च हिन्दू जातियों का सामाजिक व्यवहार उनके लिए क्रूर था। दूसरी ओर उनका पारिवारिक वातावरण अत्यन्त मानवीय था, जो कबीर पंथ को सामाजिक एकता के सिद्धान्त से ओतप्रोत था। सामाजिक एवं पारिवारिक वातावरण के इस अन्तर ने अम्बेडकर के जीवन - पर अमिट प्रभाव डाला। उनके पिता एक धार्मिक एवं अनुशासित व्यक्ति थे। इसने भी उनके व्यक्तित्व को एक स्वरूप प्रदान किया। उनके पिता के कारण ही उनमें कठिन श्रम, आज्ञापालन, निर्देशन, साहस, आत्मअभिव्यक्ति, सहनशीलता तथा दलितों एवं अन्य वंचित वर्गों के प्रति सेवा भावना का विकास हुआ।

बालक भीम को अपने बड़े भाई के साथ प्राथमिक शिक्षा पूरी करके हाई स्कूल की पढ़ाई की ओर कदम बढ़ाने के समय नीची जाति का होने के कारण अस्पृश्यता का कटु अभुनव हुआ। स्कूल में बालक भीम और उनके बड़े भाई को अपने सहपाठियों के साथ कक्षा में बैठने की छूट नहीं थी, बल्कि उन्हें कक्षा के एक कोने में एक टाट पर बैठना पड़ता था, जिसे वे अपने साथ लेकर आते थे और स्कूल के बाद वापस घर ले जाते थे। शिक्षक उनकी अभ्यास पुस्तिकाओं को छूते नहीं थे। कक्षा अध्यापक उनसे केवल इसलिए प्रश्न नहीं करते या पुस्तक नहीं पढ़वाते थे कि कहीं वह अपवित्र न हो जाएँ। विद्यालय के दिनों में वे प्यास लगने पर पानी के बर्तन अथवा नल से खुद पानी नहीं पी सकते थे। ऐसे अवसर पर अध्यापक स्कूल के चपरासी से कहते थे और वह भीम के लिए नल खोलता था। जब चपरासी नहीं होता था तो भीम को सारा दिन प्यासा ही रहना पड़ता था।

स्कूल के ही दिनों में भारी बरसात के एक दिन बालक भीम ने बिना छाते विद्यालय जाने का निश्चय किया। उन्होंने अपने बड़े भाई को टोपी, झोला और छाता रखने को कहा। जब वह स्कूल पहुँचे तो उनके कुर्ते और धोती से पानी चू रहा था और भीगने के कारण उनको कड़ाके की ठंड भी लग रही थी। उनके कक्षा अध्यापक पेंडसे ने यह देखा और अपने पुत्र से बालक भीम को घर ले जाकर गर्म पानी से स्नान, गर्म कपड़े और खाने के लिए गर्म खाना देने को कहा। लेकिन उनकी यह प्रसन्नता आँसुओं में बदल गई, जब उनको कक्षा में लाया गया और अर्धनग्न शरीर के साथ अपनी श्रेणी में दोबारा पृथक टाट पर बैठना पड़ा।

गर्मी के दिनों की एक अन्य मार्मिक[3] घटना है जिसमें बालक भीम और उनके भाई और एक भाँजा मैसूर स्टेशन से गोरेगाँव में रहने वाले अपने पिताजी से मिलने के लिए निकले थे। पाड़ली से मैसूर तक ये बच्चे रेलगाड़ी से गए। पिताजी को पत्र न प्राप्त होने से वे उनको रेलवे स्टेशन पर लेने के लिए नहीं आ सके। उन्होंने एक बैलगाड़ी किराए पर ली। बैलगाड़ी कुछ ही दूर गई होगी कि गाड़ीवान को पता चल गया कि गाड़ी में बैठे बच्चे महार के हैं तो उन्हें तुरन्त वहीं पर उतर जाने को कहा। निवेदन करने और दोगुणा किराया देने की शर्त पर उनको फिर बैलगाड़ी से जाने की सुविधा मिली। भीम के बड़े भाई गाड़ी खींच रहे थे और गाड़ीवान अशुद्ध होने के भय से गाड़ी के पीछेपीछे पैदल चल रहा था। सम्पूर्ण यात्रा के दौरान वे पीने - का पानी नहीं प्राप्त कर पाए क्योंकि लोगों को पता चल गया था कि वे महार हैं। दिल तोड़ने वाली यह भयंकर यादगार बाबा साहेब अपने भाषणों औरसभाओं में कभीकभी व्यक्त करते थे। इस घटना ने बालक भीम को अपनी दीन हीन और - कारूणिक जिन्दगी की जानकारी हुई। इस प्रवास में अपने जीवन में"मुझे पहली बार यह अनुभव मिला कि हम अछूत हैं, हमें निम्न कोटि का माना जाता है, हमारा पानी और पनघट गंदे स्थानों पर होता है तथा स्पृश्य लोग हमें अछूत समझते हैं। मेरे बाल मन को यह बात बड़ी चुभती रही।" एक अछूत घर में जन्म लेने के कारण अम्बेडकर को मिलने वाली तृष्णा एवं अनादर यहीं समाप्त नहीं होता है। अम्बेडकर के जीवन में एक नया अवसर तब आया जबकि बड़ौदा के महाराज ने उन्हें राज्य के खर्च पर अमेरिका के कोलम्बिया विश्वविद्यालय में कुछ अन्य छात्रों के साथ अध्ययन के लिए भेजने का निश्चय किया। अम्बेडकर ने 4 जून, 1913 को बड़ौदा राज्य के साथ एक अनुबन्ध किया और जुलाई 1913 के तीसरे सप्ताह में गायकवाड़ अध्येता के रूप में कोलम्बिया विश्वविद्यालय में प्रवेश ले लिया। यहाँ उनको समानता के साथ स्वतंत्रता पूर्वक

घूमनेफिरने-, सोचने वं कार्य करने का अवसर मिला क्योंकि, अब उनके ऊपर अछूत का विशेषण नहीं लगा था। अपने सामाजिक अनुभवों पर आधारित पुस्तिका 'वीजा की प्रतीक्षा' में अम्बेडकर लिखते हैं कि यूरोप और अमेरिका के मेरे पाँच वर्षों के मेरे प्रवास ने मेरे मन से इस भावना को बिल्कुल निकाल दिया था कि मैं अछूत हूँ और एक अछूत व्यक्ति भारत में कहीं भी जाता है, अपने लिए और दूसरों के लिए समस्या खड़ी कर देते हैं।[4] कोलम्बिया विश्वविद्यालय में अपना अध्ययन पूर्ण करने के पश्चात् 1916 में उन्होंने न्यूर्याक छोड़ दिया और अक्टूबर, 1916 में लंदन स्थिति 'ग्रेज इन' संस्था में 'बार एट ला' करने के लिए प्रवेश प्राप्त कर लिया। साथ ही उन्होंने 'लंदन स्कूल आफ इकानामिक्स एवं पालिटिक्स' में अर्थशास्त्र का अध्ययन करने के लिए प्रवेश प्राप्त कर लिया किंतु इसी बीच अध्येता छात्रवृत्ति की अवधि समाप्त होने के कारण बड़ौड़ा के महाराज ने उन्हें वापस बुलाने का आदेश प्रसारित कर दिया। उनकी उच्च अध्ययन की जिज्ञासा को देखते हुए उनके प्रोफेसर एड़विन केनन ने विशेष संतुति के आधार पर उन्हें अक्टूबर 1916 के उपरांत चार वर्ष तक लंदन विश्वविद्यालय में शोध् प्रबंध जमा करने की अनुमति दे दी। इस प्रकार लंदन विश्वविद्यालय में अपनी उपाधि पूरा करने का निश्चय करके अम्बेड़कर 21 अगस्त, 1917 को भारत वापस लौट आए। बड़ौदा सरकार के साथ हुए इकरारनामे के अनुसार आंबड़कर का बड़ौदा पहुँचना जरूरी था। अपने वायदे के अनुसार अम्बेडकर को दस साल रियासत की नौकरी करनी आवश्यक थी। सितम्बर, 1917 में महाराजा बड़ौदा के सैनिक सचिव के रूप में अम्बेडकर को नियुक्ति मिली और यह सूचना भी संबंधित लोगों को दी गई कि रेलवे स्टेशन पर उनका स्वागत करें। उन्हें बड़ौदा स्टेशन पर राज्य का कोई अधिकारों दिखाई नहीं दिया। अपने भाई के साथ शहर के विभिन्न होटलों में गए। सभी लोग अम्बेडकर की जाति पूछते थे और अस्पृश्य होने के कारण दरवाजे बंद कर लेते थे। अन्ततः एक पारसी को होटल में वे ठहरे। वहाँ उन्होंने अपनी जाति नहीं बताई। अछूत रूपी धब्बा उनका पीछा कर रहा था।

बड़ौदा नरेश की बड़ी इच्छा थी कि वे अम्बेडकर को अपने रियासत का अर्थमंत्री बनाए। उन्हें अन्य विभागों का प्रशासनिक अनुभव हो सके, इस दृष्टि से अम्बेडकर को अपना सैनिक सचिव बनाया। इतने उच्च पद पर आसीन अधिकारी को, वहाँ के क्लर्क, मुंशी यहाँ तक कि अरदली भी दूर से फाइल फेंक दिया करते थे। दफ्तर में उन्हें पीने के लिए पानी भी नहीं मिलता था। इस प्रकार अपमान का घूँट पीते हुए वे काम कर रहे थे, तभी उन्हें पारसी के होटल से भी निकाल बाहर किया। कोई हिंदू या मुसलमान उन्हें रहने के लिए स्थान देने के लिए तैयार नहीं था। यह बात उन्होंने एक पत्र द्वारा बड़ौदा नरेश को सूचित की। महाराजा ने अपने मंत्री से उनके रहने की व्यवस्था करने को कहा। मगर मंत्री ने अपनी लाचारी जाहिर की। भूखे प्यासे भटकते भटकते अम्बेडकर एक पेड़ की छाया में जा बैठे, मगर उनकी आँखों से गंगा जमना बह निकली और वे दहाड़ मारकर रो पड़े। कैसी दशा है हिंदू समाज में अस्पृश्य कीवह कितनी भी ऊँची पढ़ाई हासिल क्यों न आया हो !, फिर भी अन्य जातियों से हीन से हीन व्यक्ति से भी उसके कनिष्ट ही समझा जाता है।[5] अतः अत्यन्त खिन्न मन से निराशा में डूबे अम्बेडकर 1917 के नवम्बर मास में मुंबई वापिस लौट आए। यद्यपि बाल्यकाल से ही अम्बेडकर के मन में अस्पृश्यता, जातिवाद और वर्ण व्यवस्था आदि के बारे में विचार आने शुरू हो गए थे किंतु जैसेजैसे उम्र बढ़ने लगी-, शिक्षा बढ़ने लगी और समझ में वृद्धि होने लगी, वैसे वैसे उनके विचार भी अधिक-स्पष्ट धारदार और दाहक होने लगे। अतः अस्पृश्यता निर्मित करने वाली हिंदू समाज रचना, समाज रचना करने वाले हिंदू धर्मशास्त्र, उनका तत्वज्ञान आदि का उन्होंने एक अलग पद्धति से अध्ययन भी किया।

इस प्रकार विद्यालय के दिनों में अपने सहधर्मियों से मिले अपमान और अमानवीय व्यवहार ने उनके अन्दर उच्च स्वर्ण जातियों के प्रति एक तृष्णा पैदा कर दी। उन्होंने गम्भीरता से अछूतों की जीवन जीने की परिस्थितियों पर विचार किया और उसके समाधान के लिए सोचना शुरू किया। डाअम्बेडकर के अन्दर के आदमी ने धार्मिक साहित्य द्वारा अछूतों की . समस्या का समाधान करना चाहा। बौद्धों के आध्यात्मिक समानता के एक सिद्धान्त ने उन्हें बहुत प्रभावित किया लेकिन उन्होंने अछूतों की भौतिक समस्याओं के समाधान की दृष्टि से इस तरह के सिद्धान्तों की सीमाओं को भी पहचाना। उन्होंने अन्य सामाजिक सुधारकों के साहित्य एवं कार्यों को भी समझने का प्रयास किया, जिसमें गौतम बुद्ध, सन्त कबीर, ज्योतिबा फूले, महर्षि दयानन्द सरस्वती, महादेव गोबिन्द राणाडे, महाराज सायाजीराव गायकवाड़, छत्रपति साहूजी महाराज इत्यादि प्रमुख थे। अम्बेडकर जब विधा अध्ययन के लिए कोलम्बिया विश्वविद्यालय पहुँचे, तब उनकी आयु मात्र 21 वर्ष थी। वहाँ पर वे प्रोफेसर जान डेवी के ज्ञान मीमांसा और प्रयोजनवादी दृष्टिकोण से बहुत प्रभावित हुए। वो एक उच्चकोटि के दार्शनिक थे। बीसवीं शताब्दी की शुरुआत में पूरी दुनिया में राजनीतिक, सामाजिक, आर्थिक, भौतिक एवं आध्यात्मिक स्तर पर भी महान परिवर्तन हो रहे थे। प्रथम महायुद्ध, 1918 की रूसी क्रान्ति, दुनियाभर में फैले साम्राज्यवादी विचार, सामंतवाद, पूँजीवाद, साम्यवाद ने भी अम्बेडकर के जीवन एवं कार्यों पर अमिट प्रभाव डाला। कार्ल माक्र्स, प्रोफेसर गोल्डनविजनर ;कोलम्बिया विश्वविद्यालय, अमेरिका में नीग्रो प्रजाति के समाजसुधारक एवं शिक्षाशास्त्री बुकर टी वाशिगंटन का जीवन, लंदन स्कूल आफ इकोनोमिक्स एवं पालिटिक्स साइंस के प्रोफेसर एडवीन केनन तथा अमेरिकी संविधान के 14वें संशोधन ने अम्बेडकर के

विचारों को स्वरूप प्रदान किया। इस युग के आध्यात्मिक स्तर के संकट और विरोधाभासों ने भी जो मुख्यतः आदर्श एवं मूल्यों के क्षेत्र में थे, भी उनको विशेष रूप से प्रभावित किया।

डाअम्बेडकर की सामाजिक न्याय दर्शन की यात्रा .

भीमराव अम्बेडकर के जीवन एवं मिशन की यात्रा समाज में मूलभूत संरचनात्मक परिवर्तन के द्वारा सामाजिक न्याय की स्थापना का संदेश देती है। अतः उनके चिन्तन एवं लेखन में 'सामाजिक न्याय' प्रमुख विषय वस्तुओं में से एक था, जो कि उनके लिए अनिवार्यतः एक जातिविहीन समाज भी था। बाबा साहेब ने सामाजिक न्याय की प्राप्ति एवं न्यायपूर्ण समाज की स्थापना के लिए जहाँ एक ओर मौजूदा सामाजिक व्यवस्था की निर्मम आलोचना की, वहाँ दूसरी तरफ स्वतंत्रता, समता, न्याय, भाईचारा एवं जाति के विनाश पर आधारित सामाजिक व्यवस्था का वैकल्पित प्रारूप भी प्रस्तुत किया।[6] अम्बेडकर इस बात से आश्वास्त थे कि अच्छी सामाजिक व्यवस्था को दो परीक्षाओं से गुजरना चाहिए पहला, न्याय की परीक्षा एवं दूसरी, उपयोगिता की परीक्षा। उनका जाति आधारित हिन्दू सामाजिक व्यवस्था का उनका विश्लेषण इन दो परीक्षणों पर आधारित था।

इस प्रकार समाज के वंचितों, शोषितों एवं दलितों की मुक्ति ही सामाजिक न्याय का मूल आधार है। जिसका उद्देश्य मनुष्य को सामाजिक व आर्थिक शोषण एवं भेदभाव के परंपरागत बंधनों से मुक्ति दिलाना है। यह वस्तुतः ऐसी सामाजिक व्यवस्था की कल्पना है जो समाज के हर समुदाय को स्वतंत्रता एवं बराबरी के अधिकार की गारंटी दे सके।[7] सामाजिक न्याय में आर्थिक न्याय भी शामिल होता है। यह वह सद्गुण है जो कि हमें इन संगठित मानवीय क्रियाओं के सर्जन में मार्गदर्शन देता है। सामाजिक न्याय को समता, स्वतंत्रता एवं सम्मान से जोड़ा जाता है, जिसका मतलब है कि ये तीनों सामाजिक न्याय के लिए जरूरी है और इनमें किसी एक को नकारने का मतलब न्याय से नकारना होगा।[8]

डाराजनीतिक -अम्बेडकर ने देखा कि भारतीय समाज में अनूठा छूआछूत व्याप्त था जिसमें वे सभी प्रकार के सामाजिक . अधिकारों से वंचित थे। अछूतों का सामाजिकरण इस प्रकार से किया गया था कि उन्हें अपने निम्न सामाजिक स्तर की कोई गुरेज नहीं थी। साथ ही अछूतों को ऐसा सोचने के लिए बाध्य किया जाता था कि वे इतने निचले स्तर पर पैदा हुए हैं कि उनके भाग्य के साथ कुछ नहीं हो सकता। इतना ही नहीं, उन्हें यह विश्वास भी दिलाया जाता था कि उन्हें जो दिया गया है, उससे बेहतर व्यवहार पर उन्हें जोर देने का अधिकार नहीं है। अतः अम्बेडकर ने इस अन्यायपूर्ण व्यवस्था को उजागर करने एवं सदियों से पीड़ित दबे कुचले अछूत समाज को उन घृणित परिस्थितियों एवं अमानवीय अन्याय से मुक्त करने की शपथ ली, जिसके अन्तर्गत वे जन्म लेकर कराह रहे थे। वे इस बात को बारबार उजागर करते रहे कि अछूतों को - सार्वजनिक सड़क इस्तेमाल करने से रोका जाता था। इस असहायपन ने अछूतों को दास से बदतर स्थिति में पहुँचा दिया था। अम्बेडकर का इस कहावत पर कड़ा विश्वास था, ''दास को बताओ कि वह दास है तो वह अपनी दासता के खिलाफ विद्रोह करेगा'' और वे मानव अधिकारों की प्राप्ति के लिए अछूतों के बीच चेतना जगाने के लिए इस बात का प्राय दोहराते थे। उन्होंने 'बहिष्कृत हितकारिणी सभा)1929(की स्थापना की और उसके माध्यम से अछूत समुदाय के विद्यार्थियों में शिक्षा के प्रसार के लिए छात्रावास, पुस्तकालय एवं सामाजिक अध्ययन केन्द्र शुरू किए।

दरअसल अम्बेडकर इस बात से अति आहत थे कि अज्ञानता, मूर्खता एवं अत्यन्त सहनशीलता के कारण अछूत अन्याय सहन कर रहे थे। चूँकि वे मानवता द्वारा उपार्जित विरासत के प्रति जागरूक नहीं थे, इसलिए उन्होंने अपनी स्थिति शोचनीय एवं असहायपन की बना ली थी। इस तरह वे भोजन, कपड़ा एवं आवास जैसी सामान्य जरूरतों के भी मोहताज रहें जबकि भारत को सोने की चिड़िया कहा जाता था।

न्याय को भारतीय सन्दर्भ में धर्म अथवा आचरण के कड़े प्रचलन के सन्दर्भ में एक अहम सामाजिक मूल्य के तौर पर अथवा वर्णव-्यवस्था पर आधारित सामाजिक व्यवस्था के तौर पर देखा जाता था। डाव्यवस्था का कड़ा -अम्बेडकर ने वर्ण . विरोध किया। अम्बेडकर के अनुसार यह स्थापित व्यवस्था श्रेणीकृत असमानता पर आधारित थी और इसे हिन्दू कानून द्वारा वैधता प्राप्त थी। इसमें समता, स्वतन्त्रता, लोकतन्त्र एवं मानव अधिकारों के लिए कोई स्थान नहीं था। उनका यह भी मानना था कि श्रेणीकृति असमानता की व्यवस्था काल्पनिक नहीं थी बल्कि कानूनी और दंडात्मक थी क्योंकि इसने हिन्दू कानून के कड़े आचरण को अनिवार्य बनाया जो कि अलगअलग प्रावधान कर-अलग जाति एवं लोगों के लिए अलग-ता है एवं जिसमें सबके लिए एक समान व्यवहार की कल्पना नहीं है। इस सम्बन्ध में डाअम्बेडकर का मत है कि चर्तुवर्णीय . व्यवस्था स्थापित व्यवस्था का कानून था जिसे उच्च वर्गों द्वारा बनाया गया था। अछूतों के पास उसे मानने के अलावा कोई रास्ता नहीं था। अछूतों के पासउच्च वर्गों के विरुद्ध कोई अधिकार नहीं थे। अतः उच्च वर्ग उन्हें जो देना चाहते थे,

उसके शिवाय उन्हें कुछ उपलब्ध नहीं होता था। अछूत अपने अधिकारों के लिए जोर नहीं दे सकते थे। ऐसा माना जाता था कि अछूतों को दया एवं एहसान की भीख माँगनी चाहिए और उन्हें जो दिया जाए, उसी पर सन्तोष करना चाहिए।[9]

इस प्रकार न्याय की ऐसी अवधारणा उस सामाजिक अभिक्रम के द्वारा तय की गई थी, जिसने समता के बजाय अनुक्रम को वरीयता दी, जिसने पारंपरिक अधिकारों के सम्मान एवं पारंपरिक कर्तव्य के निष्पादन को महत्व दिया और जिसमें सबके लिए एक समान व्यवहार की कोई कल्पना नहीं थी। यह व्यवस्था उसी प्रकार की थी जिसके विषय में एंतोल फ्रांस ने चेतावनी दी थी कि ''न्याय का मतलब उनके लिए है जिनके द्वारा स्थापित अन्याय स्वीकार किया जाता है।[10] अम्बेडकर के अनुसार अछूतों में सामाजिक चेतना का अभाव था, जो कि ब्राह्मणवाद के संकल्पित थे। नैतिकता से चिह्नित होनेवाला उनका आचरण भी नैतिक उदासीनता से चिह्नित होता था जोकि उन्हें उन असमानताओं एवं अन्यायों के बेपरवाह बनाता था, जिससे अछूत पीड़ित रहे हैं। वे इस असमानताओं एवं अन्याय में किसी गलती को देखने में असमर्थ थे। अम्बेडकर ने यहाँ तक भी महसूस किया कि ब्राह्मणवादी मूल्य उच्च जातियों द्वारा अछूतों को सामाजिक न्याय इंकार करने के लिए इस्तेमाल किए जाते थे। उच्च जातियों में जाति के प्रति इस चेतना ने ही अम्बेडकर को न्याय के कानूनी विचार की वैद्यता के बारे में संदेही बनाया जिसमें कुछ नियमों के निर्माण एवं प्रचलन के माध्यम से गलती करने के लिए सजा एवं जख्म के लिए मुआवजा शमिल है।

अम्बेडकर का मानना था कि सैद्धांतिक स्तर पर कानूनी न्याय व्यवहारिक स्तर पर अप्रभावी होगा। उन्होंने ध्यान दिया कि 'यह सोचा गया है कि समान न्याय का यह सिद्धांत स्थापित व्यवस्था के लिए मौत का आघात बनेगा। वास्तव में, किसी क्षति की बजाय स्थापित व्यवस्था ने अपना काम जारी रखा। यह पूछा जा सकता है कि समाज न्याय का सिद्धांत प्रभावी होने में विफल क्यों रहा। इसका जवाब बहुत सरल है। न्याय का सिद्धांत प्रतिपादित करना एक बात है जबकि इसको प्रभावी करना अलग बात है। समान न्याय का सिद्धांत प्रभावी है या नहीं, यह आवश्यक तौर पर नागरिक सेवाओं के स्वभाव एवं विशेषता पर निर्भर होता है, जो इस सिद्धांत के लागू रहने की व्यवस्था करती है। यदि नागरिक सेवा अपने वर्गपूर्वाग्रह की - वजह से स्थापित व्यवस्था की पक्षकार एवं नई व्यवस्था की विरोधी है तो नई व्यवस्था कभी भी अस्तित्व में नहीं आ सकती। 1871 में पेरिस कम्यून के गठन में कार्ल माक्र्स द्वारा मान्य एवं सोवियत कम्युनिज्म के गठन में लेनिन द्वारा अपनाई गई नई व्यवस्था की सफलता के लिए नई व्यवस्था के सुसंगत नई नागरिक सेवा जरूरी थी। दुर्भाग्यवश, ब्रिटिश सरकार ने नागरिक सेवा के अधिकारियों के बारे में कभी प्रवाह नहीं की। वास्तव में, इसने उन वर्गों के लिए प्रशासन के द्वार खोल दिए जो हिन्दुओं की पुरानी व्यवस्था पर विश्वास करते थे, जिसमें समता के सिद्धांत के लिए कोई जगह नहीं थी। इस वास्तविकता के फलस्वरूप, भारत ब्रिटिश द्वारा शासित था लेकिन हिन्दुओं द्वारा प्रशासित था।[11]

इस प्रकार अम्बेडकर के अनुसार उच्च जाति के प्रशासकों का हिन्दू पूर्वाग्रह और अछूतों के प्रति विरोधभाव होता है-, जिसके फलस्वरूप अछूतों को सुरक्षा एवं न्याय से इनकार किया जाता है। अम्बेडकर ने सत्याग्रह का गाँधीवादी तरीका इस्तेमाल करके, महाड़ में सार्वजनिक तालाब से पेयजल लेकर (1927), पूना में पार्वती मन्दिर में प्रवेश के लिए संघर्ष कर (1929), एवं उसके बाद नासिक में काला राम मन्दिर में प्रवेश कराकर (1930-35) अछूतों के लिए धार्मिक एवं सामाजिक अधिकार हासिल करने के कई प्रवेश भी किए।[12] अम्बेडकर के अनुसार इन आन्दोलनों की असफलता ने दिखा दिया कि अछूत वस्तुतः हिन्दू समाज के हिस्से नहीं हैं। वे उस सामाजिक ढाँचे में उच्च जाति के हिन्दूओं के समक्ष कभी भी स्वीकार नहीं किए जाएंगे। इससे काफी हद तक स्पष्ट हो गया कि समता की कानूनी धारणा की निम्नतम सीमा की यह धारणा राजनीतिक नागरिकता के अनुरूप संकल्पना के लिए अनुमति नहीं देती है। इस प्रकार 1935 में अम्बेडकर ने अछूतों के धर्मांतरण के मुद्दे को उठाया और महाराष्ट्र के नासिक जिले में 13 अक्टूबर 1935 में हुए येवला सम्मेलन में अम्बेडकर ने घोषित कर दिया कि वे एक हिन्दू के तौर पर नहीं मरेंगे।[13] दूसरा अवसर था लंदन में 1930 में सम्पन्न हुआ गोलमेज सम्मेलन, जिसमें अम्बेडकर ने पीड़ित वर्गों के लिए अलग राजनीतिक प्रतिनिधित्व के मुद्दे पर गाँधी और कांग्रेस का विरोध किया।[14] इससे पूर्व 'मताधिकार पर साउथबोरो कमेटी के समक्ष प्रमाण' (1919) में अम्बेडकर जो दलित वर्गों के प्रतिनिधि के तौर पर आमंत्रित थे, ने वाकपटुता से समान मताधिकार के लिए दलित समाज को सार्वजनिक क्षेत्र के सार्वजनिक कुँओं, सड़कों, स्कूलों, मन्दिरों एवं दाहसंस्कार स्थलों में पहुँच निश्चित करने के लिए एवं उनके हितों एवं विचारों को समुचित - प्रतिनिधित्व देने हेतु विशेष प्रावधान करने के लिए तर्क दिया।[15]

अम्बेडकर का दृढ़विश्वास था कि सामाजिक न्याय का मार्ग शिक्षा के द्वारा तय किया जाना था। वे सामाजिक बुराई एवं अन्याय को जड़ से नष्ट करने के लिए शिक्षा के प्रभाव पर दृढ़ता से विश्वास करते थे, क्योंकि भारत में सामाजिक अन्याय की समस्या न सिर्फ आर्थिक थी, बल्कि सांस्कृतिक भी थी।[16] अम्बेडकर का मानना है कि समाज के वंचित वर्गों को केवल भोजन एवं आवास की सुविधा प्रदान करना ही पर्याप्त नहीं है बल्कि उससे अधिक आवश्यक था कि उनके मन से मस्तिष्क

से हीन भावना को खत्म किया जाए जिसने सदियों से उनके विकास का बाधित किया हुआ है। साथ ही उनके अपने लिए एवं देश के लिए उनके जीवन के महत्व के बारे में उनके अन्दर की चेतना को जगाया जाए जिसे भारत की सामाजिक चेतना ने क्रूरता से उनसे छीन लिया था। अम्बेडकर का दृढ़विश्वास था कि उच्च शिक्षा के प्रचार के बिना कुछ भी बेहतर हासिल नहीं हो सकता। यह बात आज भी उतनी ही सत्य है जितनी कि जब अम्बेडकर ने लिखा था।

अम्बेडकर का मानना है कि सामाजिक सद्भावना की स्थापना के लिए एक अनिवार्य आवश्यकता सामाजिक न्याय है जिसे हमारे समाज के निर्धनतम लोगों, शोषित एवं वंचित वर्ग के लोगों के सामान्य विकास एवं सशक्तीकरण से ही हासिल किया जा सकता है। अम्बेडकर इसके लिए शिक्षा एवं नौकरियों की उपलब्धता पर जोर देते थे। अम्बेडकर ने महसूस किया कि भारतीय समाज के मामले में यदि जाति व्यवस्था को नष्ट करने के इच्छुक भारतीय समाज के निचले स्तर को शिक्षित किया जाएगा तो जाति व्यवस्था नष्ट हो जाएगी। जो जाति व्यवस्था को नष्ट करना चाहते हैं उन्हें शिक्षा देने से भारत में लोकतन्त्र की सम्भावना बेहतर होगी और लोकतन्त्र सुरक्षित हाथों में होगा। उनके अनुसार, गरीब लोगों को शिक्षित करना एवं उनमें राजनीतिक चेतना एवं संविधानिक स्वभाव की सही समझ विकसित करना बहुत महत्वपूर्ण है। उनकी शिक्षा का अर्थ है शान्ति एवं न्याय से लोकतन्त्र एवं राजनीतिक व्यवस्था कायम करना। शिक्षा के बारे में उनकी इतनी ऊँची सोच थी कि उन्होंने अपने तीन शब्दों के नारे शिक्षा, संगठन एवं संघर्ष में शिक्षा को प्रथम एवं सर्वोच्च प्रमुखता दी।[17]

वस्तुतः अम्बेडकर का जीवन का अन्तिम उद्देश्य था - मौलिक रूप से सामाजिक लोकतन्त्र की स्थापना करना। उनके अनुसार "सरकार का लोकतान्त्रिक स्वरूप की स्थापना के लिए समाज में लोकतांत्रिक स्वरूप का होना एक पूर्व शर्त है। यदि सामाजिक लोकतन्त्र न हो तो लोकतन्त्र के औपचारिक ढाँचे का कोई मूल्य नहीं है और वास्तव में यह बेमेल हो जाएगा। परन्तु राजनीतिक नेताओं ने कभी महसूस नहीं किया कि लोकतंत्र सिर्फ सरकार का स्वरूप ही नहीं होता है, वह वास्तव में समाज का एक स्वरूप भी होता है। लोकतन्त्र अम्बेडकर के सामाजिक न्याय की परिकल्पना का सबसे अहम यन्त्र था। उनके जीवन का प्राथमिक सरोकार था पढ़ना और हमेशा अच्छे शासन की संकल्पना को समझना। वे ऐसे स्वशासन के पक्ष में खड़े हुए जो कि दक्ष एवं अच्छा शासन हो। उनके अनुसार शासन वर्ग की क्षमता एवं दक्षता ही अच्छे शासन के लिए पर्याप्त नहीं होती बल्कि जरूरी यह है कि शासक वर्ग के अन्दर सबका भला करने की इच्छा हो, स्वार्थपूर्ण वर्ग हितो से उत्पन्न आन्तरिक सीमाओं से मुक्ति की इच्छा हो। स्वार्थपूर्ण वर्ग हित से युक्त दक्षता में सेवा अच्छा शासन देने के बजाय विरोधी वर्गों के दमन का साधन मात्र होने की सम्भावना बनी रहती है।[18]

अम्बेड़कर के सामाजिक न्याय के दृष्टिकोण में शासन की शक्ति का विभाजन (Separation of Power) एवं विभिन्न विभागों के कार्य आबंटन के विचार भी शामिल हैं। उनके अनुसार सरकार का अस्तित्व सिर्फ अन्याय, अत्याचार एवं दमन रोकने के लिए होता है। उनका मानना है कि किसी भी सरकार को व्यक्ति के मौलिक अधिकारों का हनन नहीं करना चाहिए। वे प्रशासन के किसी भी प्रकार के भेदभाव का विरोध करते हैं। अम्बेडकर के अनुसार, लोगों के विभिन्न समूहों के बीच सामाजिक शान्ति एवं न्याय स्थापित करने में कानून एक अहम कारक होता है। उनके अनुसार, सिर्फ एक वैधानिक कार्य नहीं था बल्कि पूरे समाज एवं राष्ट्र के पूरे जीवन को नियंत्रित करता था और करता है। उन्होंने स्पष्ट तौर पर घोषणा की कि कानून के समक्ष सभी नागरिक एक समान हैं और उन्हें समान नागरिक अधिकार प्राप्त है। कानून का कोई भी अधिनियमन, विनियमन, आदेश, परम्परा, या व्याख्या, जिसके द्वारा कोई जुर्माना, नुकसान या अयोग्यता थोपी जाती है या किसी नागरिक के खिलाफ कोई भेदभाव किया जाता है, उसका प्रभाव संविधान के अंगीकार के साथ ही समाप्त हो जाएगा।

वस्तुतः अम्बेडकर सभी प्रकार के भेदभाव के खिलाफ खड़े हुए। उनके राजनीतिक आदर्शों का सबसे बड़ा शत्रु उनकी गरीबी थी। उन्होंने अन्याय, सामाजिक दासता, असमानता, एवं गरीबी के खिलाफ एवं दलितों के बीच से इसे समाप्त करने के लिए जोरदार तरीके से संघर्ष का बिगुल बजाया। वे प्रेम एवं घृणा दोनों के एक संयोजन का प्रतिनिधित्व करते थे - ज्ञान के लिए प्रेम तथा गरीबी व अज्ञान के लिए घृणा। गरीबी का गुणगान करने वाली हर चीज की वे निन्दा करते थे। समाजवाद का उनका विचार गरीबी पर एक प्रहार भी है।[19] उनके अनुसार किसी भी किस्म का भेदभाव सामाजिक प्रगति के लिए खतरा है। सामाजिक भेदभाव एवं सामाजिक बहिष्कार उनकी समाजवाद की अवधारणा के शत्रु हैं क्योंकि उनका समाजवाद समान व्यवहार एवं समान स्वाधीनता व सम्मान पर जोर देता है।[20] उनके अनुसार एक सच्चा समाजवादी, दुर्व्यवहार एवं दमन को बर्दाश्त नहीं करेगा क्योंकि ये समाजवाद के विरोधी हैं। उनका यह भी विश्वास था कि मौजूदा सामाजिक व्यवस्था जनमानस में समाजवाद की भावना उत्पन्न करने के अनुकूल नहीं है।

यहाँ अन्य महत्वपूर्ण बात यह है कि अम्बेडकर के सामाजिक न्याय के दृष्टिकोण में राष्ट्रवाद भी शामिल है। अम्बेडकर का मानना है कि राष्ट्रवाद एक ऐसा सच है जिसको न तो नकारा जा सकता है और न ही उससे बचा जा सकता है। चाहे कोई इसे तर्कहीन प्रकृति या सकारात्मक भ्रम कहे, लेकिन सच तो यह है कि यह शक्तिशाली बल है जिसमें साम्राज्य हिलाने की

सक्रिय शक्ति होती है। वे राष्ट्रवाद को मानवजीवन में असल शक्ति के तौर पर मानते थे। उनके राष्ट्रवाद का शुरुआती बिन्दु चैंकाने वाला था, जिसे पूरी तरह गलत समझा गया और उसे राष्ट्र विरोधी के तौर पर देखा गया। उनका दृष्टिकोण सदैव पूर्णरूपेण राष्ट्रीय था।

इस प्रकार सामाजिक न्याय के उनका दृष्टिकोण मानवतावादी एवं राष्ट्रवादी था। वे न सिर्फ विदेशी सत्ता से मुक्ति चाहते थे बल्कि उन लोगों के लिए आन्तिरक स्वाधीनता भी चाहते थे, जो इससे वंचित थे। वे कहते थे 'हमें ऐसी सरकार चाहिए जिसमें शासक को मालूम हो कि कहाँ आज्ञाकारिता समाप्त होगी और विरोध शुरू होगा। वह जीवन की सामाजिक एवं आर्थिक सहिंता में संशोधन से नहीं डरेगा जो कि तत्काल न्याय एवं सुविधा निर्धारण करता है। ब्रिटिश सरकार कभी भी ऐसा कर पाने में सक्षम नहीं होगी। इसे सिर्फ वही सरकार कर पाएगी जो कि लोगों की हो, लोगों के लिए हो एवं लोगों के द्वारा चुनी गई हो।[21]

ब्रिटिश शासन के दौरान अम्बेडकर ने अछूतों के लिए सवैंधनिक अधिकारों एवं सामाजिक न्याय की स्थापना के लिए निम्नलिखित बातों पर जोर दिया। ''वंचित वर्गों को समस्त शैक्षणिक सुविधाएँ प्रदान की जानी चाहिए, उनकी आबादी, जरूरत एवं महत्व के आधार पर राज्य विधान सभा एवं केंद्रीय संसद में निधित्व दिया जाना चाहिए, राज्य एवं केंद्र सरकार की सेवाओं में नौकरियाँ आरक्षित की जानी चाहिए, वंचित वर्गों को देश की समस्त लोकतांत्रिक संस्थाओं में प्रतिनिधित्व दिया जाना चाहिए, वंचित वर्गों के लिए अलग निर्वाचन क्षेत्र बनाया जाना चाहिए एवं उनके लिए सम्यक बस्तियाँ स्थापित की जानी चाहिए।[22] इस प्रकार ब्रिटिश काल के दौरान अम्बेडकर भारतीय समाज में शोषितों, दलितों के, विशेषकर वंचित समुदायों के सबसे बड़े, प्रवक्ता के रूप में उभरे।

अम्बेडकर वस्तुतः एक क्रियाशील दृष्टा थे। इन वर्गों की पीड़ा के उन्मूलन एवं इस विषय में ब्रिटिश सरकार की भूमिका पर उनके विचार व्यवहारिक एवं दृढ़ प्रतज्ञ थे। उनके विचार प्रवाह में भारत में लोकतांत्रिक समाज की स्थापना भी केंद्र में रहती थी। उनकी मान्यता थी कि जब तक अछूत मौलिक मानव अधिकारों का लाभ नहीं उठाएँगे, भारत का लोकतांत्रिक समाज नहीं पनपेगा। भारतीय समाज के लोकतांत्रिकरण में हिंदू समाज में व्याप्त एवं व्यवहार में लाई जाने वाली अस्पृश्यता सबसे बड़ी बाधा है। जिसमें अछूतों के साथ नागरिकों के समान व्यवहार नहीं किया जाता था और उन्हें सामाजिक अधिकारों से वंचित भी रखा जाता था। हरेक हिन्दू गाँव में अछूतों के लिए अलग बस्ती होती थी। हिन्दू गाँव में रहते थे और अछूत अलग बस्ती में रहते थे। [23]

अम्बेडकर ने दलितों को सामाजिक न्याय दिलाने के लिए बुनियादी मानवीय जरूरत)Basic Human Needsके सिद्धांत का (सहारा लिया, जिसके अन्तर्गत दलितों की बुनियादी जरूरते धन, सम्पति, पेशेवर गतिशीलता जैसी भौतिक वस्तुओं तक सीमित नहीं हैं बल्कि समाज में सम्मान, राजनीतिक भागीदारी बराबरी आदि गैर भौतिक मानवीय जरूरतें भी उतनी ही महत्वपूर्ण हैं। उन्होंने व्यक्तिगत अधिकारों के ऊपर समुदाय की जरूरी प्राथमिकता के दावों की वाकपटुता से वकालत की जिसके आधार पर औपचारिक समानता से हटना जायज हो सकता है। उनमें पहला हैविर-भेदभाव ःोधी दृष्टिकोण। भेदभाव विरोधी दृष्टिकोण कोण का मुख्य उद्देश्य दलित समाज के लोगों को कलंकित करने वाले निजी व्यवहारों एवं कानूनी प्रक्रियाओं को रोकना। इस सामाजिक बिमारी के उपचार के लिए अम्बेडकर ने आरक्षण के माध्यम से दलितों की राजनीतिक भागीदारी की सम्भावना प्रस्तुत की। उनका विचार था कि एक विधानमंडल मुख्यतः उच्च जाति के लोगों से बना होता है। वह अस्पृश्यता समाप्त करने, अन्तरजातीय विवाहों को मंजूरी देने-, सार्वजनिक सड़कों, सार्वजनिक मंदिरों, सार्वजनिक स्कूलों के प्रयोग पर प्रतिबन्ध को समाप्त करने के कानून पारित नहीं करेगा। इसी कड़ी में अम्बेडकर ने क्षतिपूर्ति प्रतिमान की वकालत की। उनका तर्क था कि उच्च जातियों के दमनकारी व्यवहार एवं सामाजिक संस्थाओं की वजह से अछूतों के साथ अन्याय एवं बढ़ती अयोग्यता की स्थिति आई।[25]

सामाजिक न्याय के उनके विचार में अछूतों को शिक्षा प्रदान करने के लिए अतिरिक्त एवं बेकार पड़ी जमीन को अछूतों के स्कूल एवं कालेज के लिए पुनःवितरण किया जाना और रिपब्लिकन पार्टी का गठन किया जाना शामिल था। उन्होंने अपने दल के प्रतीक के रूप् हाथी को चुना जिसकी पहचान ज्ञान, शक्ति एवं साहस के रूप् में की जाती है।

अम्बेडकर चाहते थे कि दलित समुदाय के लोग आधुनिक भारत में सामाजिक आर्थिक एवं धार्मिक क्रांति के अगुआ बनें। सामाजिक रूप से पिछड़े व शोषितों के सबसे बड़े शुभ चिंतक, बाबा साहेब भीमराव अम्बेडकर के सामाजिक एवं संवैधानिक दृष्टिकोण ने उन्हें हताशा एवं निराशा का रास्ता नहीं दिया बल्कि उन्हें राष्ट्रीय मामलों में अधिकार जताने का अनोखा अवसर प्रदान किया। अम्बेडकर का दृढ़ विश्वास था कि वंचितों को राष्ट्रीय विकास की मुख्य धारा में जोड़ने के सबसे अच्छे

संसाधनों में से शिक्षा एक है। भारत के संविधान में प्राथमिक शिक्षा की मुफ्त एवं अनिवार्य व्यवस्था इस उद्देश्य का सार्थक परिणाम है।

अम्बेडकर का विचार था कि हिंदू समाज को समता एवं जाति विहीनता के दो प्रमुख सिद्धान्तों के आधार पर पुनर्संगठित किया जाना चाहिए। उन्होंने पादरी एवं पुरोहित की प्रचलित व्यवस्था को लोकतान्त्रिक बनाए जाने की माँग की ताकि हरेक अपनी पसन्द के अनुसार अपना पेशा चुन सके। उनका दृढ़ विश्वास था कि इस प्रक्रिया से न सिर्फ उच्च एवं निम्न समुदायों के बीच जातिवाद, अस्पृश्यता एवं भेदभाव की बुराई समाप्त होगी। बल्कि समाज में एकता एवं समरसता की भावना बढ़ेगी। वे इस बात पर स्पष्ट थे कि धार्मिक भावनाओं को विनाश किए बगैर जाति का विनाश सम्भव नहीं है क्योंकि जाति व्यवस्था इसी पर टिकी है।

इसी प्रकार अम्बेडकर ने अनुसूचित जातियों एवं अनुसूचित जनजातियों के लिए संविधानिक सुरक्षा उपाय की वकालत मानवतावादी खैरात के तौर पर नहीं की थी। उनका दृष्टिकोण आरक्षण की नीति एवं उसके क्रियान्वयन के माध्यम से वंचित वर्गों के साथ ऐतिहासिक दमन एवं उसके फलस्वरूप उनकी दुर्दशा का सुधारना था। वे चाहते थे कि अनुसूचित जाति एवं जनजाति अपने बलबूते पर खुद को आगे बढ़ाएँ और दुनिया के समक्ष प्रतियोगिता के लिए तैयार हो। अम्बेडकर कभी भी नहीं चाहते थे कि अनुसूचित जातियाँ एवं अनुसूचित जनजातियाँ 'पिछड़ेपन' में स्थायी रूचि विकसित करें।

इस प्रकार अम्बेडकर का सामाजिक न्याय का दर्शन एक समर्थ एवं शक्तिशाली भारत का दर्शन है जिसमें सदियों से वंचित समाज को ज्यादा समतापूर्ण एवं सम्मान जनक संदर्भों में न्याय उपलब्ध हो सके। अछूतों के कल्याण एवं भलाई के लिए राजनीतिक न्याय काफी नहीं था। अतः उन्होंने राजनीतिक न्याय पूरा करने के लिए पूर्व शर्त के तौर पर सामाजिकआर्थिक - न्याय का विचार किया।

सन्दर्भ सूची

1. देखें, बीअम्बेडकर .आर., हू वर दि शूद्राज? मुम्बईठाकर एवं कम्पनी :, 1946; एवं बीअम्बेडकर .आर., दि अनटचेबल्स- हू आर दे एण्ड व्हाई दे विकम अनटचेबल्स? नई दिल्लीअमृत बुक कम्पनी :, 1949।

2. देखें, दत्तोपन्त ठेंगड़ी, डाअम्बेडकर और सामाजिक क्रान्ति की यात्रा ., लखनऊलोकहित प्रकाशन :, 2005

3. देखें, 'धनंजय कीर', डाचरित-जीवन :अम्बेडकर ., मुंबईपापुलर प्रकाशन :, 2016, पृ .15-16

4. नानक चन्द रत्तू, डासंस्मरण और स्मृतियाँ :अंबेडकर .आर.बी . (नई दिल्ली, सम्यक प्रकाशन, 2009 पृष्ठ (29

5. बसन्त मून, डा बाबा साहेब अंबेडकर .; भारतराष्ट्रीय पुस्तकन्यास :, (1991 (पृ .16

6. डाअम्बेडकर ., कास्टस इन इण्डियादेयर मैकेनिज्म :, जेनेसिस एवं डेवलपमेंट ;अमेरिका में 9 मई 1916 को कोलम्बिया विश्वविद्यालय में डाबोल्डेन वेइजर के मानव शास्त्र के सेमिनार में पढ़ा गया शोधपत्र इण्डिन एंटिक्वेरी .ए.ए ., मई 1917, खंड-41, डा बाबा साहेब .अम्बेडकर राइटिंग्स एंड स्पीचेस :; खंड-1, शिक्षा विभाग, महाराष्ट्र सरकार, मुम्बई, 1979 एवं डा . अम्बेडकर, एनिहिलेन आफ कास्टविद ए रिप्लाई टू महात्मा गाँधी :, जातिपाति तोड़क मंडल के वार्षिक अधिवेशन के समक्ष - सम्बोधन, 1935

7. विवरण के लिए देखें, डेविड मिलर, प्रिंसिपल आफ सोशल जस्टिस, वैफम्ब्रिज हावर्ड यूनिवर्सिटी प्रेस, 1999, पृ .1-20

8. राजशेखरिया, ए.एम., बीदी क्वेरट फार सोशल जस्टिस :अम्बेडकर .आर., नई दिल्ली, उप्पल, 1989

9. पूर्व में उद्धृत, डा राइटिंग्स एंड स्पीचेस :बाबा साहेब अम्बेडकर .(WS) खंड-5, पृ .99

10. वीकृष्णमूर्ति अय्यर द्वारा उद्धृत .आर ., अम्बेडकर सेंटेनरीसोशल जस्टिस एंड अनड़न वास्ट :, दिल्ली.सी.पी.आर.बी :, 1991, पृ .28

11. पूर्व में उद्धृत, डा राइटिंग्स एंड स्पीचेस :बाबा साहेब अम्बेडकर .; खंड-5, पृ .252

12. राववेंकेटेश्वर .डी ., डा .आर.बी .अम्बेडकरचैम्पियन आफ ह्यूमन राइट्स इन इण्डिया :, नई दिल्ली, मानक प्रकाशन, पृ . 27-40

13. The Times of India , 14-10-1935

14. अम्बेडकरव्हाट दि कांग्रेस एंड गाँधी हैव डन टू दि अनटचेबल्स :, मुम्बई, ठक्कर एवं कम्पनी, 1965

15. रिपार्ट आफ दि प्रेंफचाइज कमेटी (1918-19लार्ड साउथ बोरो :चेयरमैन (, भारत सरकार, केन्द्रीय प्रशासनशाखा, कलकत्ता

16. डा अम्बेडकर आन बाम्बे यूनिवर्सिटी अमेंडमेंट बिल .II CWBA में प्रकाशित, खंड-2, शिक्षा विभाग, महाराष्ट्र सरकार, 1982

17. दलित एजुकेशन, डाबाबा साहेब अम्बेडकर शोध एवं दस्तावेज केन् .द्र समता प्रकाशन, नागपुर, 1994, पृ .118-122.

18. B.R. Ambedkar, What Congress and Gandhi have done to the Untouchables, Bombay. Thakur and co. 1945.p.240.

19. आनन्द कुमार, पालिटिकल सोशियोलाजी आफ पावर्टी इन इण्डिया: बिटविन पालिटिक्स आफ पावर्टी एंड पावर्टी आफ पॅलिटिक्स, नई दिल्ली, आई आई प् ए, 2004

20. डाअम्बेडकर .आर.बी ., स्टेट एंड माइनारिटिज, बम्बई, ठक्कर एवं कम्पनी, 1947 पृ .408-412

21. दास भगवान, दस स्पोक अम्बेडकर, भाषण, खंड-1, 1963, पृ .8

22. डा अम्बेडकर .आर.बी .(डब्ल्यू.एस.), खण्ड-1, 1979, पृ .264

23. अम्बेडकर 'अनटचेबल्स दी चिल्ड्रेन आफ इडियन घेटो' (डब्ल्यू एस(, खण्ड-5, 1989, पृ .108-109

24. अम्बेडकर, 'एविंडेस बिफोर साउथबोरो कमेटी (WS) खण्ड-1 (1979) पृ .264

25. देखें, अम्बेडकर, शूद्र कौन थे? (WS) खण्ड-7 (1990).

*** Corresponding Author:**
डा. बलवान गौतम, *चेयर प्रोफेसर*
डॉ. अम्बेडकर पीठ, हिमाचल प्रदेश केंद्रीय विश्वविद्यालय,धर्मशाला (हि. प्र.)
ई–मेल-bs.20aug@gmail.com, मो. नं :9971327848